बच्चों के लिए

क़ुरआन की बातें

भाग-2

सैयद नज़र ज़ैदी

अनुवाद

उज़्माँ अंजुम

विषय-सूची

कुछ अल्फ़ाज़ का मतलब

इस किताब में कुछ ऐसे अल्फ़ाज़ आयेंगे, जिनको मुख़्तसर शक्ल में लिखा गया है। किताब पढ़ने से पहले ज़रूरी है कि उन अल्फ़ाज़ की मुकम्मल शक्ल और मतलब समझ लिया जाये, ताकि किताब पढ़ते वक़्त कोई परेशानी न हो। ऐसे अल्फ़ाज़ ये हैं :

अलैहि० : इस की मुकम्मत शक्ल है, **'अलैहिस्सलाम'**, यानी 'उन पर सलामती हो !' नबियों और फ़रिश्तों के नाम के साथ इज़्ज़त और मुहब्बत के लिए ये अल्फ़ाज़ बढ़ा देते हैं।

रज़ि० : इस की मुकम्मल शक्ल है, **'रज़ियल्लाहु अन्हु'**, इस के मायने हैं अल्लाह उन से राज़ी हो !' **'सहाबी'** के नाम के साथ यह इज़्ज़त और मुहब्बत की दुआ बढ़ा देते हैं।

सहाबी उस ख़ुशक़िस्मत मुसलमान को कहते हैं, जिसे नबी सल्ल० से मुलाक़ात का मौक़ा मिला हो। **सहाबी** की जमा (बहुवचन) **सहाबा** है और मुअन्नस (स्त्रीलिंग) **सहाबिय** : है।

रज़ि० अगर सहाबिया के नाम के साथ इस्तेमाल हुआ हो तो **रज़ियल्लाहु अन्हा** पढ़ते हैं और अगर **सहाबा** के लिए इस्तेमाल हुआ हो तो **रज़ियल्लाहु अन्हुम** कहते हैं।

सल्ल० : इस की मुकम्मल शक्ल है, **'सल-लल-लाहु अलैहि व सल्लम'** इसका मतलब है, 'अल्लाह उन पर रहमत और सलामती की बारिश करे।' हज़रत मुहम्मद सल्ल० का नाम लिखते, लेते या सुनते हैं तो इज़्ज़त और मुहब्बत के लिए यह दुआ बढ़ा देते हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
(अल्लाह के नाम से जो मेहरबान और रहम करने वाला है)

आपस की बातें

जिन बच्चों ने इस किताब का पहला भाग पढ़ा है, वे यह बात ज़रूर जान गये होंगे कि इस दुनिया में शानदार ज़िन्दगी गुज़ारने और दूसरी दुनिया में (जिसमें हम मरने के बाद जायेंगे) अल्लाह की रहमत का हक़दार बनने के सबसे अच्छे तरीक़े क़ुरआन मजीद बताता है। और ऐसा क्यों न हो, इस पाक किताब में जो बातें बतायी गई हैं वे अल्लाह की फ़रमाई हुई हैं।

"क़ुरआन की बातें" के इस दूसरे भाग में हम ने पाक और मुबारक क़ुरआन ही की कुछ और बातें लिखी हैं और ये सब ऐसी बातें हैं जिनसे दोनों जहानों में कामयाबियाँ प्राप्त करने के तरीक़े मालूम होते हैं। हमें उम्मीद है सब बच्चे ये बातें खूब ध्यान से पढ़ेगें और उन पर अमल करने का पक्का इरादा कर लेंगे।

हमारा ख़्याल है, यह बात नन्हें बच्चे भी मानेंगे कि हमारी इस पूरी दुनिया में कोई एक आदमी भी ऐसा नहीं, जो यह न चाहता हो कि उसकी ज़िन्दगी खूब इज़्ज़त और आराम से गुज़रे। लेकिन ऐसी कामयाबी सब प्राप्त नहीं कर सकते और इसकी वजह यह होती है कि सब लोग शराफ़त, नेकी और मेहनत को नहीं अपनाते।

कुछ लोग बचपन ही से नटखट और बेपरवाह होते हैं, वे न अच्छी बातें सीखते हैं, न उन पर अमल करते हैं। इसीलिए अपनी इस ग़लती की वजह से ज़िन्दगी की दौड़ में पीछे रह जाते हैं और तकलीफ़ भरी ज़िन्दगी गुज़ारते हैं।

इनके मुकाबले में जो लोग बचपन ही से अच्छी बातें सीखते हैं और उन पर अमल करते हैं, वे कामयाबियां हासिल करते और इज़्ज़त व आराम से ज़िन्दगी गुज़ारते हैं।

इन दोनों क़िस्म के इन्सानों की हालत पर ग़ौर करने से यह बात पूरी तरह समझ में आ जाती है कि फ़ायदा अच्छी बातें सीखने और उनपर अमल करने में है। हम उम्मीद करते हैं कि प्यारे बच्चे यह किताब अच्छी बातें सीखने के लिये पढ़ेंगे और फिर उन पर सच्चे दिल से अमल भी करेंगे। देखें यह इज़्ज़त और यह कामयाबी कौन-कौन हासिल करता है?

नज़र ज़ैदी

बुज़ुर्गों का अदब

बुज़ुर्गों ने कहा है— "बा-अदब बा-नसीब, बे-अदब बे-नसीब" यानी जो दूसरों का अदब करता है, उसकी तक़दीर सवँर जाती है, लेकिन जो ऐसा नहीं करता, सबके साथ बे-अदबी से बात करता है, वह बदनसीब बन जाता है, न उसकी इज़्ज़त की जाती है और न उसे आराम नसीब होता है।

हमारा दीन-इस्लाम हमें अदब सिखाता है और हुक्म देता है कि हम अपनों और परायों, सबकी इज़्ज़त करें। ख़ास तौर पर माँ-बाप का अदब करने पर तो इस दीन ने बहुत ही ज़ोर दिया है। क़ुरआन मजीद में बयान हुआ है—

> "तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया कि तुम अल्लाह के सिवा किसी की इबादत न करो। अपने माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करो। अगर उनमें से कोई एक या दोनों बूढ़े होकर तुम्हारे पास रहें, तो उन्हें उफ़ तक न कहो। न झिड़क कर जवाब दो, बल्कि बहुत अदब से बात करो। और नर्मी और अदब से उनके सामने झुक कर रहो और दुआ किया करो कि ऐ परवरदिगार! उन पर रहम कर, जिस तरह उन्होंने रहम और मुहब्बत के साथ मुझे बचपन में पाला था।"
>
> 17 : 23-24

क़ुरआन की इन आयतों के अलावा और कई जगहों पर माँ-बाप की ख़िदमत और अदब करने का हुक्म दिया गया है और इस बार-बार की ताकीद से साबित होता है कि अल्लाह के नज़दीक यह

बात यानी माँ-बाप की ख़िदमत और अदब बहुत ही ज़रूरी है, जैसा कि हम सब जानते हैं कि अल्लाह ने ऐसा एक भी हुक्म नहीं दिया, जिसमें हमारा फ़ायदा न हो। सच बात तो यह है कि हर चीज़ को पैदा करने वाला और सबको रोज़ी देने वाला ख़ुदा अपनी शान में इतना बड़ा है कि उससे बड़ा कोई नहीं है। वह इस बात का मुहताज नहीं कि कोई उसकी तारीफ़ करे, अगर हम उसकी तारीफ़ करते हैं, तो इसमें ख़ुद हमारा फ़ायदा है। उसने कुरआन में जितनी बातें बतायी हैं, उनपर अमल करने में भी हमारा ही फ़ायदा है। अतः माँ-बाप का अदब करने में भी ख़ास हमारा फ़ायदा है। जो भी अल्लाह का यह हुक्म मानेगा, उसे बेशुमार फ़ायदे हासिल होंगे, जो यह हुक्म नहीं मानेगा, वह घाटे में रहेगा।

यह बात दुनिया के सब अक्लमन्द मानते हैं कि बच्चों के साथ जितनी मुहब्बत माँ-बाप को होती है किसी और को नहीं होती और जितना भला माँ-बाप अपने बच्चों का चाहते हैं, कोई दूसरा नहीं चाहता। और जब बात यह है तो शरीफ़ और अच्छा होने का सुबूत यह होगा कि सच्चे दिल से माँ-बाप की इज़्ज़त की जाये। उनका अदब न करना और उनका भला न चाहना, तो नालायक़ों और बदक़िस्मतों का तरीक़ा होगा।

नालायक़ बन जाने के अलावा माँ-बाप का अदब न करने और उनका कहना न मानने में दूसरे भी नुक़सान हैं। अगर कोई बच्चा बा-अदब न होगा, ज़िद्दी और शरारती बन जायेगा, तो धीरे-धीरे माँ-बाप की मुहब्बत और ध्यान भी कम हो जायेगा।

अल्लाह ने माँ-बाप के दिलों में औलाद का जो प्यार डाल दिया है उससे मजबूर होकर वे कुछ दिन तो शरारती और बे-अदब बच्चों की ग़लतियों को माफ़ करते रहते हैं, लेकिन फिर उनकी मुहब्बत नफ़रत

में बदलने लगती है, यहाँ तक कि कई बार तो अख़बारों में इस मज़मून का इश्तहार छपवा देते हैं कि हमारे फ़लां बेटे से हमारा अब कोई ताल्लुक़ नहीं।

सोचने की बात है कि यह कितना बड़ा नुक़्सान है? यह बिल्कुल ऐसी बात है जैसे आदमी हरे-भरे बाग़ से निकल कर आग के गड्ढे में गिर जाये। अल्लाह ने इस नुक़्सान से बचने के लिये ही माँ-बाप का अदब करने का हुक्म दिया है।

जो बच्चे अपनी नादानी की वजह से अपनी प्यारी अम्मी का कहना नहीं मानते और ज़िदें करके अपने प्यारे अब्बू को परेशान करते हैं, उन्हें चाहिये कि वे यह तरीक़ा फ़ौरन छोड़ दें और बहुत अच्छे प्यारे-प्यारे बच्चे बन जायें।

माँ-बाप के लिये उनके बच्चे ख़ुशबूदार फूलों की तरह होते हैं। वे अपने इन फूलों की ज़्यादा-से-ज़्यादा हिफ़ाज़त करते हैं और हर तरह के नुक़्सान से बचाते हैं। कोई भी बच्चा छोटी उम्र में अपना ख़र्च उठाने के क़ाबिल नहीं होता। उसका खाना-पीना, कपड़े और पढ़ाई का सारा ख़र्च माँ-बाप पूरा करते हैं और अक्सर ऐसा भी होता है कि बच्चों की ये ज़रूरतें पूरी करने के लिये वे ख़ुद बहुत-सी तकलीफ़ उठा लेते हैं।

इस मुहब्बत का क्या यह बदला होना चाहिये कि ये फूल काँटे बन जायें और अपने माँ-बाप को दुख देने लगें? हरगिज़ नहीं—हरगिज़ नहीं।

यह तो बहुत बड़ी नालायक़ी और नादानी होगी कि अपने मोहसिनों और भला चाहने वालों को सताया जाये। प्यारे बच्चो को चाहिये कि अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ सच्चे दिल से अपने माँ-बाप

का अदब करें। उनकी ख़िदमत में लगे रहें और उनके बताये हुये तरीक़े पर चलकर उन्हें ख़ुश करें।

याद रखना चाहिये कि अल्लाह ने माँ-बाप के साथ ऊँची आवाज़ में बोलने से भी रोका है। हुक्म दिया है कि उनके सामने मजबूर बनकर सिर झुकाओ और अगर वे बूढ़े हो गये हों, तो ख़ुश-ख़ुश उनकी सब ज़रूरतें पूरी करो और उनके लिये दुआयें माँगो।

इस सिलसिले में यह बात भी अच्छी तरह याद रखनी चाहिये कि बड़ों का अदब करने की यह बात माँ-बाप का अदब करने तक ही नहीं है, बल्कि सही इस्लामी अख़्लाक़ यह है कि हर आदमी की इज़्ज़त की जाये और अपनों-परायों सबको फ़ायदा पहुँचाया जाये।

माँ-बाप के बाद उस्ताद हैं। उनका भी सच्चे दिल से अदब करना चाहिये और इस कोशिश में लगे रहना चाहिये कि उनकी कोई ख़िदमत की जा सके। इसी तरह बड़ी उम्र के सब बुज़ुर्ग इस बात के हक़दार हैं कि उनकी ख़िदमत की जाये। इसके अलावा अपने से छोटी उम्र के बच्चों के साथ अच्छा सुलूक करना भी बहुत ज़रूरी है।

अल्लाह के आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने भी हमें इन दोनों बातों का हुक्म दिया है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया—

> "जो बड़ों का अदब और छोटों से अच्छा सुलूक नहीं करता, वह हम में से नहीं है।" —अबूदाऊद

झूठी गवाही देना गुनाह है

बच्चों की ज़िन्दगी में भी ऐसे वाकये आम तौर पर होते रहते हैं कि उन से गवाही देने के लिये कहा जाता है। मिसाल के तौर पर स्कूल में दो बच्चे किसी बात पर लड़ने लगे। मुक़दमा हेड मास्टर साहब तक पहुँचा और जब कसूर किसका है? तो ऐसे मौक़ों पर सच्ची गवाही देनी चाहिये। यह गुनाह की बात होगी कि अपने दोस्त को सज़ा से बचाने के लिये झूठ बोल दिया, "जी! शरारत तो पहले उसने की थी।"

देखने में यह बात मामूली लगती है, झूठ बोलने वाला इस बात से खुश होता है कि मैंने अपने दोस्त को सज़ा से बचा लिया और जिसके लिये झूठ बोला गया था, वह भी बहुत खुश होता है और अपने झूठे दोस्त का शुक्रिया अदा करता है। लेकिन यह बात मामूली नहीं है, बल्कि ऐसी खतरनाक है कि इससे और बहुत-सी बुराइयाँ पैदा होती हैं।

आम बोलचाल में इसे झूठी गवाही देना कहते हैं। यह उन बड़े गुनाहों में शामिल है, जिनकी कड़ी सज़ा दी जाएगी। अल्लाह ने कुरआन में फरमाया–

> "(और अल्लाह के प्यारे बन्दे वे हैं) जो झूठी गवाही नहीं देते और अगर किसी ऐसी जगह गुज़रें जहाँ फ़ुज़ूल काम किये जा रहे हों, तो (उनमें शामिल नहीं होते बल्कि) शरीफ़ आदमियों की तरह आगे बढ़ जाते हैं।" 25:72

इस आयत से यह बात अच्छी तरह मालूम हो जाती है कि अल्लाह झूठी गवाही देने वालों को पसन्द नहीं करता। इसकी वजह यह है कि ऐसा करने से फ़साद फैलता है। पहली बात तो यह कि जिसने गुनाह किया हो वह तो बच जाता है और बेगुनाह मुजरिम बन जाता है। अब होता यह है कि जिसने गुनाह किया था वह अपने गुनाह को एक मामूली काम समझ कर वैसे ही और गुनाह करने पर दिलेर हो जाता है, ख़्याल करता है कि मेरा कोई क्या बिगाड़ेगा। मेरे दोस्त झूठी गवाही देकर मुझे फिर बचा लेंगे। वह फिर गुनाह करता है और जब पकड़ा जाता है, तो उसे अगले-पिछले सब गुनाहों की सज़ा मिलती है।

इसके मुकाबले में जिस बेगुनाह को झूठी गवाही की वजह से सज़ा मिलती है, उसके दिल में गवाही देने वाले के ख़िलाफ़ सख़्त नफ़रत और गुस्सा पैदा होता है और जब भी मौक़ा मिलता है, वह उससे बदला लेता है। ये तो वे बातें हैं जो इस दुनिया में होती हैं। झूठी गवाही देने का असल नुक़सान यह है कि अल्लाह उससे नाराज़ हो जाता है। वह रहमतों का हक़दार नहीं रहता, बल्कि अल्लाह के गुस्से का हक़दार बन जाता है।

इन सब बातों के अलावा इस मामले पर इस तरह भी ग़ौर करना चाहिये कि अगर कोई हमारे ख़िलाफ़ झूठी गवाही देकर सज़ा दिलवा दे, तो हमारा क्या हाल हो?

शायद कुछ बच्चे यह ख़्याल करें कि वाह! हमारे ख़िलाफ़ झूठी गवाही कौन दे सकता है? तो उनका इस तरह सोचना ग़लत है। जब कोई बुराई शुरू हो जाती है, तो फिर छूत की बीमारी की तरह एक से दूसरे आदमी को लगती चली जाती है और कोई भी दावे से यह नहीं कह सकता कि वह उससे बचा रहेगा। ख़ास तौर पर वे तो किसी तरह

भी यह नहीं कह सकते जिनकी वजह से यह बीमारी फैली थी।

झूठी गवाही देने से रोकने के अलावा अल्लाह ने यह हुक्म भी दिया है कि सच्ची गवाही ज़रूर दी जाये। दुनिया में बुराइयों को मिटाने के लिये असल में यह बात भी बहुत ज़रूरी है कि जिन लोगों ने कोई गुनाह किया हो, उनके बारे में यह बताया जाये कि गुनाह उन्होंने किया है। मिसाल के तौर पर किसी की कोई चीज़ चुरा ली गई हो या इसी तरह कोई और नुक़्सान पहुंचाया गया हो तो उन्हें सज़ा दिलवाई जाये और उन्हें गुनाह करते देखा हो तो बताया जाये कि हाँ इसने यह गुनाह किया है। ऐसा करने को सच्ची गवाही देना कहते हैं। अल्लाह ने क़ुरआन मजीद में फ़रमाया :—

> "ऐ लोगो! जो ईमान लाये हो इन्साफ़ क़ायम करने वाले बन जाओ और अल्लाह के लिये (सच्ची) गवाही दो, चाहे तुम्हारे इन्साफ़ और तुम्हारी गवाही की वजह से ख़ुद तुम्हें या तुम्हारे माँ-बाप या रिश्तेदारों को नुक़्सान पहुँचता हो।" 4 : 135

एक और जगह फ़रमाया :—

> "उस आदमी से बड़ा ज़ालिम कौन होगा जिसके ज़िम्मे अल्लाह की तरफ़ से एक गवाही हो और वह उसे छिपाये।"
>
> 2 : 140

सच्ची गवाही देना असल में इस्लामी अख़्लाक़ का ज़रूरी हिस्सा है। दुनिया में अमन इसी तरह से क़ायम हो सकता है कि जो लोग जान बूझकर दूसरों को नुक़्सान पहुँचायें और दूसरे गुनाह करें, उन्हें अदालत में ले जाया जाये और सज़ा दिलवाई जाये। और मुजरिमों को उसी वक़्त सज़ा दी जा सकती है, जब कोई यह गवाही दे कि हाँ इसने

यह गुनाह किया है। अगर कोई गवाही न दे तो अदालत इस बात पर मजबूर होती है कि मुजरिम को छोड़ दे।

देखने में यह बात भी अच्छी लगती है कि एक आदमी सज़ा से बच गया, लेकिन यह अच्छी बात नहीं होती, क्योंकि जो आदमी जुर्म करने के बावजूद सज़ा पाने से बच जाता है, वह जुर्म करने पर दिलेर हो जाता है। समझने लगता है कि मेरा कोई क्या बिगाड़ सकता है।

हाँ! इस सिलसिले में एक बात ज़रूर है कि कुछ लोगों से भूल-चूक में कोई ग़लती हो जाती है और वे अपनी ग़लती को मानकर तौबा कर लेते हैं और फिर भूलकर भी वैसी ग़लती नहीं करते। ऐसे लोगों के बारे में हुक्म है कि उनकी बुराइयाँ न ढूंढ़ीं जायें। लेकिन अगर ऐसे लोगों का मुक़दमा अदालत में पेश कर दिया जाये तो उनके बारे में भी सच्ची गवाही देना ज़रूरी है। उनके लिये भी माफ़ी उस वक़्त तक है, जब तक उनका मुक़दमा अदालत में न जाये।

रह गये वे लोग जो जानबूझ कर गुनाह करते हैं, बल्कि गुनाह को अपना रोज़गार बना लेते हैं, तो उनके गुनाह को छुपाना गुनाह है। अगर कोई उनके जुर्मों का हाल जानता हो तो ज़रूरी है कि उस बात की गवाही दे। यह गवाही देना ज़रूरी है और अल्लाह की तरफ़ से उसका सवाब मिलेगा, लेकिन शर्त यह है कि गवाही बिल्कुल सच्ची हो। झूठी गवाही देना ख़ुद गवाह की तबाही है। यह तबाही चाहे देर से आये, लेकिन आती ज़रूर है। ख़ुदा के घर देर है, अन्धेर नहीं!!

बुरा नाम न रखो

बच्चों में आदत होती है कि मज़ाक़-मज़ाक़ में किसी का कोई बुरा-सा नाम रख लेते हैं और फिर उस नाम से बुला कर उसे परेशान करते हैं या किसी के शरीर में कोई कमज़ोरी हो तो इसकी वजह से उसका ऐसा नाम रख लेते हैं, जिसे वह पसन्द नहीं करता।

यह एक ऐसी बात है, जिसे बड़े और ऐसे गुनाहों में शामिल समझना चाहिये जिनकी सख़्त सज़ा मिलेगी। बुरा नाम रखने के साथ किसी का मज़ाक़ उड़ाने से भी मना किया गया है। यह भी एक बहुत ही घटिया आदत है। शरीफ़ लोग ऐसा कभी नहीं करते। शराफ़त और नेकी की बात तो यह है कि अपनों, परायों सबकी इज़्ज़त की जाये और सबको ऐसे नामों से पुकारा जाये, जिसे वे पसन्द करें।

अल्लाह ने क़ुरआन मजीद में फ़रमाया:–

> "ऐ लोगो, जो ईमान लाये हो! न मर्द दूसरे मर्दों का मज़ाक़ उड़ायें, हो सकता है वे उनसे अच्छे हों और न औरतें दूसरी औरतों का मज़ाक़ उड़ायें, हो सकता है, वे उनसे अच्छी हों। आपस में एक-दूसरे की बुराइयाँ तलाश न करो। न इल्ज़ाम रखो और एक-दूसरे को बुरे नामों से न पुकारो।"
> —49 : 11

कोई आदमी कैसा भी ग़रीब और कम दर्जे का हो वह यही चाहता है कि उसकी इज़्ज़त की जाये और ऐसा चाहना उसका हक़ बनता है। जो लोग किसी से उसका यह हक़ छीनते हैं और उसे बेइज़्ज़त करते हैं, अल्लाह उनसे बहुत नाराज़ होता है।

किसी को कम दर्जे का समझने और उसका मज़ाक उड़ाने वाले हकीकत में ख़ुद कम दर्जे के और जाहिल होते हैं। शरीफ़ और पढ़े-लिखे लोग कभी ऐसा नहीं करते। वे तो दूसरों की इज़्ज़त बढ़ाते और परेशानियाँ दूर करते हैं।

एक मशहूर कहानी है। किसी देश का बादशाह शिकार खेलने गया तो एक हिरन का पीछा करते हुये अपने लश्कर से बिछड़ गया। वह जंगल में साथियों को ढूँढ़ता फिर रहा था। एक जगह एक अन्धे फ़कीर को बैठे हुए देखा, तो उससे सवाल किया, "साईं जी क्या हमसे पहले इस तरफ़ से कोई गुज़रा है?" फ़कीर ने जवाब दिया– "बादशाह सलामत! ज़रा देर पहले वज़ीर साहब इधर आये थे और उनसे पहले हुज़ूर का एक गुलाम आया था।"

बादशाह यह जवाब सुनकर बहुत हैरान हुआ। उसने पूछा:– साईं जी, आप देख नहीं सकते, फिर यह किस तरह मालूम किया कि हम बादशाह हैं और हमसे पहले हमारा वज़ीर और गुलाम इस तरफ आए थे?"

फ़कीर ने जवाब दिया, "हुज़ूर, मैंने बात करने के अन्दाज़ से यह अन्दाज़ा लगाया कि जो शख़्स अब मेरे पास आया है, वह देश का बादशाह है•और पहले वज़ीर और गुलाम आया था। जब गुलाम आया था तो उसने घमण्ड भरी आवाज़ में कहा था, "क्यों बे अन्धे! इधर से बादशाह सलामत की सवारी तो नहीं गुज़री?" मैं समझ गया कि यह गुलाम ही हो सकता है, जिसने ऐसी बदतमीज़ी से बात की। उसके बाद वज़ीर साहब आये, तो उन्होंने सवाल किया, "क्यों भाई, इधर से बादशाह सलामत तो नहीं गुज़रे?" मैं समझ गया कि यह पढ़ा-लिखा आदमी है और ज़रूर वज़ीर ही हो सकता है। इसीलिये तो कुछ अदब से सवाल किया। इसके बाद हुज़ूर तशरीफ़ लाये, तो इस

तरह सवाल किया, जैसे कोई बहुत इज़्ज़तदार और शरीफ़ आदमी हो, और मैंने अन्दाज़ा लगा लिया कि हुज़ूर वही बादशाह हैं, जिनके बारे में गुलाम और वज़ीर ने पूछा था।"

यह तो खैर एक कहानी है। लेकिन हमारी असल ज़िन्दगी की बात भी बिल्कुल इसी तरह है। जो कमीने और कम अक्ल हैं, किसी की भी इज़्ज़त नहीं करते। बस अपनी अकड़ और गुरूर में रहते हैं। लेकिन शरीफ़ और पढ़े-लिखे लोग ऐसा नहीं करते। वे यह बात जानते हैं कि चाहे कोई बिल्कुल गरीब ही हो, इन्सान होने के रिश्ते से हमारा भाई है, क्योंकि दुनिया के सब इन्सान एक ही बाप हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) और एक ही माँ हज़रत हव्वा (अलैहिस्सलाम) से पैदा हुये हैं। इन्सानों, इन्सानों में यह अमीरी-गरीबी और काला-गोरा होने का फ़र्क तो हालत ने पैदा कर दिया है।

यह बात तो आम लोगों की इज़्ज़त और अदब करने की थी। प्यारे बच्चों को इस बात का भी ख़्याल रखना चाहिये। लेकिन असल में हम यह बता रहे थे कि चाहे कोई कैसा भी गरीब हो, उन्हें उसकी इज़्ज़त करनी चाहिये। उससे कोई काम कराना हो तो ऐसे अन्दाज़ में कहना चाहिये, जिससे वह खुशी महसूस करे। उसका दिल न दुखे और किसी का कोई ऐसा नाम तो कभी नहीं रखना चाहिये, जिसमें उसका कोई ऐब या कमज़ोरी ज़ाहिर होती हो। ऐसा करने से खुद उनकी इज़्ज़त बढ़ेगी। कहावत मशहूर है कि तुम दूसरों की इज़्ज़त करोगे, दूसरे तुम्हारी इज़्ज़त करेंगे।

बेशक कभी ऐसा होता है कि कोई अपनी कमज़ोरी की वजह से बुरी बात सुनकर भी एक बुरे आदमी का अदब करने पर मजबूर होता है। लेकिन ऐसी हालत में भी उसका दिल ज़रूर दुखता है और जो किसी का दिल दुखाता है, अल्लाह उससे बहुत नाराज़ होता है।

देखा गया है कि कुछ बच्चे नादानी से अपने घर के नौकरों की इज़्ज़त नहीं करते। बड़े बूढ़ों को भी डाँट देते हैं, समझते हैं उनका क्या है, ये तो हमारे नौकर हैं, यह तरीक़ा ठीक नहीं। शराफ़त की निशानी यह है कि अपने घरेलू नौकरों की भी इज़्ज़त की जाये और उन्हें अच्छे नामों से पुकारा जाये।

शरीफ़ घरानों में इस बात का कितना ख़्याल रखा जाता है, इसका अन्दाज़ा मशहूर बुज़ुर्ग सर सय्यद अहमद खां की ज़िन्दगी की एक घटना से होता है। सर सय्यद अहमद ख़ाँ को तो बच्चे जानते ही होंगे। ये हम मुसलमानों के वे बड़े रहनुमा हैं, जिन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी क़ायम की थी और मुसलमानों में नये ज़माने की तालीम (शिक्षा) हासिल करने का शौक़ पैदा किया था।

ख़्वाजा अलताफ़ हुसैन हाली ने अपनी मशहूर किताब 'हयाते जावेद' में लिखा है–

"बचपन की उम्र में सर सय्यद ने एक दिन घर के बूढ़े नौकर के साथ बहुत गुस्ताख़ी का सुलूक किया। उनकी अम्मी को यह बात मालूम हुई तो सर सय्यद को, जो उनके लाड़ले बेटे थे, उसी वक़्त घर से निकाल दिया। कहा कि तू मेरे घर में रहने के क़ाबिल नहीं। सर सय्यद, जो उस वक़्त सय्यद अहमद थे, कई दिन अपने एक रिश्तेदार के घर छिपे रहे और उन्हें इस शर्त पर घर आने की इजाज़त मिली कि वह बूढ़े नौकर से माफ़ी माँगें।"

यह है शराफ़त और नेकी का वह चलन जो हमें अपनाना चाहिये। छिछोरे और बदतमीज़ बनकर दूसरों का मज़ाक़ उड़ाना और बुरे नामों से पुकारना गन्दे लोगों का काम है। जो बच्चे यह गुनाह करते हैं, उनको दोस्त भी नहीं बनाना चाहिये।

हमेशा अच्छी बात कहो

बुज़ुर्गों ने कहा है– "पहले तोलो, फिर बोलो।" इस कहावत का मतलब यह है कि कोई बात ज़ुबान से निकालने से पहले यह ज़रूर सोच लो कि इसका असर क्या होगा। हक़ीक़त यह है कि हम जो बात भी कहते हैं, उसका हमारी ज़िन्दगी पर कुछ न कुछ असर ज़रूर पड़ता है। अच्छी बात कहें तो अच्छा, बुरी बात कहें तो बुरा। फिर क्या ही अच्छा हो कि हमारी ज़ुबान से ऐसी बातें ज़्यादा निकलें, जिनका असर अच्छा हो।

दुनिया में हज़ारों-लाखों आदमी मिलेंगे जो अपनी बुरी ज़ुबान और जो मुँह में आया कह देने की आदत की वजह से मुसीबतों में फंस गये। मिसाल के तौर पर किसी को गाली दे दी। उसने गर्दन पकड़ ली। फिर मुक़दमा अदालत तक गया और इस ज़रा-सी बेवकूफ़ी की वजह से जेलख़ाने की हवा खानी पड़ी।

यह तो ख़ैर एक मामूली-सी मिसाल है, वरना हक़ीक़त तो यह है कि बिना सोचे-समझे बात करने की वजह से बड़े-बड़े फ़साद पैदा हो जाते हैं और इतना नुक़सान होता है कि उसे पूरा नहीं किया जा सकता।

हमारी तारीख़ का मशहूर क़िस्सा है कि सन् 1739 ई० में नादिरशाह दुर्रानी ने हिन्दुस्तान पर हमला किया तो मुग़ल बादशाह मुहम्मद शाह ने सुलह सफ़ाई का ऐसा रास्ता निकाल लिया कि नादिरशाह कुछ ले-देकर ईरान लौट जाये और शहरियों की जान-माल महफ़ूज़ रहे। लेकिन हुआ यह कि जिन दिनों नादिरशाह

से बातचीत हो रही थी, एक नशेबाज़ ने दिल्ली में यह ख़बर फैला दी कि हमारे बादशाह ने धोखे से नादिरशाह को क़िले में बुलाया और क़त्ल करा दिया। डरे-सहमे शहरियों ने इस ख़बर को सच समझ लिया और नादिरशाह की फ़ौज के सिपाहियों को क़त्ल करना शुरू कर दिया।

यह बात नादिरशाह को मालूम हुई, तो वह नंगी तलवार हाथ में लेकर दिल्ली की सुनहरी मस्जिद की सीढ़ियों पर बैठ गया और अपनी फ़ौज के सिपाहियों को क़त्ले आम की इजाज़त दे दी। अब क्या था, ग़ुस्से में भरे हुये फ़ौजी शहरियों पर टूट पड़े और आन की आन में हज़ारों बेगुनाह क़त्ल कर दिये गये।

यह पूरा क़िस्सा आप हिन्दुस्तान की तारीख़ में पढ़ सकते हैं, यहाँ तो हम सिर्फ़ यह बताना चाहते हैं कि एक बेवक़ूफ़ की अफ़वाह के नतीजे में हज़ारों बेगुनाह क़त्ल हो गये और हज़ारों घर लुट गये।

इस तारीख़ी क़िस्से से हमें दो सबक़ मिलते हैं। एक तो यह कि बिना सोचे-समझे कोई बात ज़ुबान से नहीं निकालनी चाहिये। ख़ास तौर पर ऐसी बात तो कभी भी ज़ुबान से नहीं निकालनी चाहिये, जिससे किसी की बेइज़्ज़ती होती हो या किसी को नुक़सान पहुँचता हो, हँसी-मज़ाक़ में भी ऐसी बात ज़ुबान से नहीं निकालनी चाहिये।

अल्लाह ने क़ुरआन मजीद में हुक्म दिया है कि हमेशा अच्छी बात कहो। फ़रमाया—

> "ऐ नबी! मेरे बन्दों से कहो कि ज़ुबान से वह बात निकाला करें, जो अच्छी हो। असल में यह शैतान है, जो इन्सानों के बीच झगड़े पैदा करने की कोशिश करता है। सच यह है कि शैतान इन्सान का खुला दुश्मन है।"
>
> —17 : 53

बच्चों को चाहिये कि कुरआन मजीद की इस नसीहत को अच्छी तरह दिल में बिठा लें और पक्का इरादा कर लें कि जहाँ तक हो सकेगा अपनी ज़ुबान से अच्छी बात निकालेंगे।

किसी पर इल्ज़ाम लगाना, झूठ, चुग़लख़ोरी, गाली-गलोच, किसी की बेइज़्ज़ती करना। मतलब यह कि ऐसी बात कह देना जिससे किसी की इज़्ज़त कम होती हो, ग़ुस्से भरी आवाज़ में बोलना, ऐसे अन्दाज़ में बात करना, जिससे घमण्ड ज़ाहिर होता हो वग़ैरह सबको इन बातों में शामिल किया जायेगा, जिनसे बचने का अल्लाह ने हुक्म दिया है।

इसके मुक़ाबले में सच बोलना, सच्ची गवाही देना, अच्छे काम की तारीफ़ करना, ज़रूरी फ़ायदा पहुँचाने के लिये सिफ़ारिश करना, नर्म और मीठी आवाज़ में बात करना वग़ैरह सब अच्छी बातें हैं। हमें चाहिये कि अच्छी बातों को अपनायें और बुरी बातों से बचें, ख़ास तौर पर झूठ से। इसके बारे में कहा गया है कि यह सब बुराइयों की जड़ है।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की एक हदीस में बयान किया गया है कि एक आदमी आप (सल्ल०) के पास आया और कहने लगा। ऐ अल्लाह के रसूल! जितनी भी बुराइयाँ हैं वे सब मेरे अन्दर मौजूद हैं। मैं चाहता हूँ कि मैं उन्हें छोड़ दूँ, लेकिन छोड़ नहीं सकता। हाँ, यह कर सकता हूँ कि आप किसी एक बुराई के छोड़ने का हुक्म दें। वादा करता हूँ, वह छोड़ दूँगा।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया, ''तू झूठ बोलना छोड़ दे।'' उसने कहा, ''मैं वायदा करता हूँ कि अब कभी झूठ न बोलूँगा।''

आगे का हाल हदीस शरीफ़ में इस तरह बयान किया गया है कि

वह जब भी किसी गुनाह का इरादा करता था, तो यह सोच कर उससे रुक जाता था कि अगर प्यारे नबी (सल्ल०) ने उसके बारे में मुझसे पूछा तो कुबूल करना पड़ेगा कि हाँ मैंने यह बुरा काम किया है। अतः उसने सारे बुरे काम छोड़ दिये। ..... एक झूठ छोड़ने से उसकी सारी बुराइयाँ खत्म हो गईं।

सब मुसलमान भाई-भाई हैं

हमारे दीन इस्लाम की एक बहुत बड़ी अच्छाई यह है कि यह किसी ख़ास मुल्क के रहने वालों या किसी ख़ास नस्ल से ताल्लुक रखने वालों का दीन नहीं है, बल्कि पूरी इन्सानी बिरादरी का दीन है। कुरआन शरीफ़ में यह बात बतायी गई है कि सबसे पहले नबी हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) से लेकर सबसे आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल०) तक जितने नबी और रसूल दुनिया में आये, वे दीने इस्लाम ही को तरक्क़ी देने के लिये आये थे। इसके अलावा कुरआन शरीफ़ ने हमें यह बात भी बताई है कि दुनिया में बसने वाली कोई क़ौम भी ऐसी नहीं जिसे सीधा रास्ता दिखाने के लिये अल्लाह ने कोई नबी न भेजा हो। मानो यह दीन शुरू से है, क़ियामत तक रहेगा और उसके मानने वाले दुनिया के हर हिस्से में मौजूद हैं।

दीने इस्लाम में दाख़िल होने के लिये उन बातों को मान लेने के सिवा जो अल्लाह पाक ने बतायी हैं और उनपर अमल करने के सिवा कोई और शर्त नहीं। कोई आदमी अमरीका का रहने वाला हो या हिन्दुस्तान का, चीन का रहने वाला हो या जापान का, जो भी इस्लाम के उसूलों को मान कर उनपर अमल करने लगता है, वह मुसलमान और सब मुसलमानों का भाई बन जाता है। काले रंग के मुसलमानों का भी, गोरे रंग के मुसलमानों का भी और चीन में रहने वाले मुसलमानों का भी। मानो इस्लाम की वजह से दुनिया को जो बरकतें मिली हैं, उनमें से एक बड़ी बरकत यह है कि उसने अलग-अलग मुल्कों में बसने वाले और अलग-अलग क़ौमों में पैदा होने वाले

इन्सानों को भाई-भाई बना दिया है और यह रिश्ता ऐसा पक्का और सच्चा है कि अगर कभी मुक़ाबला आ पड़े तो ख़ून का रिश्ता टूट जाता है, लेकिन यह रिश्ता बाक़ी रहता है।

बच्चों ने इस्लामी तारीख़ में यह बात पढ़ी होगी कि प्यारे नबी (सल्ल०) अरब के बड़े शहर मक्का में रहने वाले क़ुरैश क़बीले में पैदा हुए थे। इस्लाम को फैलाने की वजह से जब इस क़बीले के बड़े सरदार आप (सल्ल०) के दुश्मन बन गये तो आप (सल्ल०) हिजरत कर के मदीना शहर तशरीफ़ ले गए और इस हिजरत की वजह से मक्का के वे क़ुरैशी सरदार जिनसे आप (सल्ल०) की रिश्तेदारी थी, आप (सल्ल०) के लिये ग़ैर हो गए और मदीने में रहने वाले अन्सार, जिनसे पहले पूरी तरह जान पहचान भी न थी, मुसलमान हो जाने की वजह से दीनी भाई बन गये

इस दीनी रिश्ते की मज़बूती का अन्दाज़ा इस बात से किया जा सकता है कि जब प्यारे नबी (सल्ल०) ने शहर मक्का फ़तह कर लिया और आप (सल्ल०) पूरे अरब के सबसे बड़े हाकिम बन गये, तो आप (सल्ल०) ने अपने पुराने शहर मक्का के बजाये शहर मदीना में रहना पसन्द किया और आप (सल्ल०) ही की वजह से इस शहर का नाम मदीनतुन्नबी (सल्ल०) मशहूर हुआ। पहले उसका नाम यसरिब था।

ख़ुदा के फ़ज़्ल से हमारा यह दीनी रिश्ता अब भी बाक़ी है, यानी सारी दुनिया के मुसलमान आपस में भाई-भाई हैं। नये मुसलमान होने वाले आदमी का ताल्लुक़ किसी भी मुल्क और किसी भी क़ौम से हो, जब वह मुसलमान हो जाता है, तो इस्लामी बिरादरी में शामिल हो जाता है। मुसलमानों का भाई बन जाता है। हमारे इसी दीनी रिश्ते के बारे में अल्लाह ने फ़रमाया—

"मुसलमान तो आपस में भाई-भाई हैं। अपने भाइयों के बीच ताल्लुक़ात को ठीक करा दो और अल्लाह से डरो उम्मीद है कि तुम पर रहम किया जायेगा।" 49:10

इससे ऊपर की आयतों में अल्लाह ने यह हुक्म दिया है कि अगर किसी बात पर मुसलमानों में झगड़ा पैदा हो जाये, तो दूसरे मुसलमानों को चाहिये कि उनमें सुलह करा दें और अगर कोई ज़िद पर अड़ जाये, यानी सुलह कराने वालों की बात न माने तो सब मिलकर उससे लड़ें, यहाँ तक कि वह इन्साफ़ की बात मान ले और सुलह कर ले।

क़ुरआन पाक की इन आयतों से यह बात साफ़ तौर पर ज़ाहिर होती है कि अल्लाह को यह बात बिल्कुल पसन्द नहीं कि मुसलमान आपस में लड़ें-झगड़ें। वह तो इस बात को पसन्द फ़रमाता है कि सब मुसलमान मिलजुल कर प्यार-मुहब्बत से रहें और एक मुसलमान दूसरे मुसलमान को अपना भाई समझे।

जब कुछ लोग एक जगह रह रहे हों, तो किसी बात पर झगड़ा पैदा हो जाना कोई अजीब बात न होगी। लेकिन यह बात ज़रूर अजीब होगी कि वे इस झगड़े को जानवरों की तरह बढ़ाते ही चले जायें। शराफ़त और अक़्लमन्दी की बात यह है कि जिस बात पर झगड़ा पैदा हुआ है, उसे इन्साफ़ के मुताबिक़ तय कर लें। ऐसा करने से झगड़ा फ़ौरन रुक जायेगा और वे उस नुक़सान से बच जायेंगे जो लड़ने वालों को ज़रूर ही उठाना पड़ता है।

लड़ाई-झगड़ा असल में शुरू ही उस वक़्त होता है, जब हर आदमी सिर्फ़ अपना ही फ़ायदा चाहता है और दिलों की यह हालत इस सूरत में पैदा होती है, जब आपस में किसी क़िस्म का ताल्लुक़ न हो। ताल्लुक़ या रिश्ता होने की सूरत में पहली बात तो यह कि झगड़ा शुरू ही नहीं होता और अगर शुरू हो भी जाये तो बहुत जल्द ख़त्म हो

जाता है। इसीलिये अल्लाह ने सब मुसलमानों को भाई-चारे के ऐसे मज़बूत रिश्ते में बान्ध दिया है, जो सारी नफ़रतों और खुदग़र्ज़ियों को ख़त्म कर देता है।

हमारे इस ज़माने में मुसलमानों के कई फ़िरके हैं, लेकिन खुदा के फ़ज़्ल से ये सब मुसलमान ही हैं। कुरआन व हदीस पर भी उनका ईमान है। इसलिये ये सब भाई-भाई हैं।

जो इख़्तिलाफ़ नज़र आता है, उसकी वजह यह है कि दीन की कुछ बातों को समझने के सिलसिले में हमारे आलिमों की रायें अलग-अलग हैं। एक ने एक बात को अपने इल्म के मुताबिक़ समझा है, दूसरे ने दूसरी तरह। हमें चाहिये इख़्तिलाफ़ की बात बड़े आलिमों तक रहने दें और जिस आलिम की बात को ठीक समझते हों, उसके बताये हुये तरीक़ों पर चलते हुये सब मुसलमानों को अपना भाई समझें और उनके साथ अच्छा सुलूक करें।

याद रखना चाहिये कि हमें जिस चीज़ ने सबसे ज़्यादा नुक़सान पहुँचाया है, वह हमारी आपस की लड़ाई है। हमारे दुश्मन बहुत चालाकी से कोई ऐसी बात फैला देते हैं, जिसकी वजह से मुसलमान आपस में लड़ने लगते हैं और जब इस लड़ाई की वजह से वे कमज़ोर हो जाते हैं, तो वे सब मुसलमानों को सख़्त नुक़्सान पहुँचाते हैं। हमारे दुश्मनों की इसी चालाकी की वजह से हमारी बड़ी-बड़ी सल्तनतें बरबाद हो चुकी हैं। अब हमें इस बात को पूरी तरह समझ लेना चाहिये और किसी हालत में भी एक दूसरे से लड़ना नहीं चाहिये।

भाई-भाई बनकर रहने का हुक्म देने के साथ अल्लाह ने हमें यह हुक्म भी दिया है कि हम आपस में लड़ाई-झगड़ा न करें।

कुरआन शरीफ़ में बयान किया गया है—

"सब मिलकर अल्लाह की रस्सी को (दीन पर कायम रहो, कुरआन पर ईमान लाओ) मज़बूती से थाम लो और फूट डालने वाली बातों में न उलझ जाओ। अल्लाह के उस एहसान को याद करो जो उसने तुम पर किया है। तुम एक-दूसरे के दुश्मन थे, उसने (अल्लाह ने) तुम्हारे दिलों में एक-दूसरे की मुहब्बत पैदा कर दी और उसके फ़ज़्ल से तुम भाई-भाई बन गये। तुम आग से भरे हुये एक गढ़े के किनारे खड़े हुए थे। अल्लाह ने तुमको उससे बचा लिया।"

—3 : 103

आपस में लड़ने-झगड़ने को अल्लाह ने ऐसा बुरा बताया है, मानो कोई आग से भरे हुए गड्ढे के किनारे पर खड़ा हो और उसमें गिरकर जल जाने वाला हो और असल में यह एक ऐसी ही बुराई है। जिस कौम के लोग आपस में लड़ते झगड़ते हों, वह तबाह होने से नहीं बच सकती। बिल्कुल कमज़ोर दुश्मन भी उस पर काबू पा लेता है।

गुस्से पर क़ाबू पाना

बुज़ुर्गों ने गुस्से को आग जैसा बताया है, मतलब यह कि जिस तरह आग हर चीज़ को जला कर खत्म कर देती है, उसी तरह गुस्सा भी बहुत तबाही फैलाता है। यह तो सब जानते हैं कि लड़ाई झगड़ा आम तौर पर गुस्से की वजह ही से शुरू होता है। एक ने दूसरे से कोई सख़्त बात कह दी, जिसे सुनकर वह गुस्से से भर गया और बस हो गई लड़ाई शुरू। फिर ऐसा भी होता है कि ज़रा-सी बात पर शुरू होने वाला झगड़ा इतना बढ़ जाता है कि क़त्ल और मुक़द्मेबाज़ी तक नौबत पहुँच जाती है।

अल्लाह ने अपने नेक बन्दों की एक निशानी यह बतायी है कि वह गुस्से पर क़ाबू पा लेते हैं और ग़लती करने वाले को माफ़ कर देते हैं। क़ुरआन मजीद में फ़रमाया गया–

> "जो लोग हर हाल में (अल्लाह के लिये) अपने माल ख़र्च करते हैं, चाहे वे अमीर हों या ग़रीब, जो गुस्से पर क़ाबू पा लेते हैं और दूसरों की ग़ल्तियाँ माफ़ कर देते हैं, ऐसे नेक लोग अल्लाह को बहुत पसन्द हैं।" 3 : 134

अगर अल्लाह के इस हुक्म पर अमल किया जाये, तो न सिर्फ़ किसी क़िस्म का झगड़ा शुरू ही न होगा, बल्कि बड़े-बड़े झगड़े आसानी से मिट जायेंगे और सब अमन चैन की ज़िन्दगी गुज़ारने लगेंगे।

गुस्से पर क़ाबू पाने का सबसे अच्छा तरीक़ा तो यह है कि आदमी

हर वक़्त यह बात याद रखे कि अल्लाह ने, जो सबका मालिक है, ऐसा करने का हुक्म दिया है और यह खुशख़बरी सुनाई है कि जो भी इस हुक्म पर चलेगा, यानी गुस्सा आने पर बे-क़ाबू न होगा, बल्कि बात टाल जायेगा और सब्र करेगा, उसे बहुत बड़ा इनाम दिया जायेगा।

इसके अलावा दूसरा तरीक़ा यह है कि जब भी गुस्सा आये और शैतान लड़ने-झगड़ने पर उभारे तो ज़रा रुक कर उसके नतीजे पर ग़ौर कर लिया जाये यानी आदमी इस बात पर ध्यान दे कि अगर मैंने गाली के जवाब में गाली दी, या नुक़सान हो जाने की सूरत में नुक़सान पहुचाने वालों को मारा, तो ज़रूर मार पिटाई तक नौबत पहुँचेगी, बल्कि बात इससे आगे यानी पुलिस-कचहरी तक पहुंच जायेगी। इस तरह से यह बात बिल्कुल आसानी से समझ में आ जायेगी कि मुसीबत में फंसने के मुक़ाबले में यह बात आसान और फ़ायदा पहुंचाने वाली है कि जिसने गुस्सा दिलाया है, उसे माफ़ कर दिया।

इस मौक़े पर यह बात बताना भी ज़रूरी है कि अल्लाह ने इन्सान के अन्दर गुस्सा बिला वजह नहीं रख दिया है, बल्कि इसका भी एक बड़ा फ़ायदा है और यह बात भी बहुत ज़रूरी है कि फ़ायदा उठाया जाये।

गुस्सा भी दरअसल अपनी जगह एक फ़ायदेमन्द चीज़ है और अगर ग़ौर किया जाये तो मालूम होगा कि यही हमें इस क़ाबिल बनाता है कि हम अपने हक़ की हिफ़ाज़त डट कर करें और अपने आप को ज़लील और बे-इज़्ज़त होने से बचायें।

मिसाल के तौर पर कोई बुरा आदमी हमसे हमारा क़लम छीन लेना चाहे, तो ऐसे मौक़े पर माफ़ कर देने से काम न चलेगा, बल्कि यह बात ज़रूरी होगी कि बहादुरों की तरह उसका मुक़ाबला करें। इसी तरह अगर कोई हमें हमारे दीन की बातों पर अमल करने से रोके तो न

सिर्फ़ यह कि उसकी बात न मानें, बल्कि यह भी ज़रूरी होगा कि ऐसे बुरे आदमी को सख़्त सज़ा दें और हमेशा के लिये उसका ज़ोर तोड़ दें।

जैसा कि हमनें शुरू में लिखा था कि गुस्से की मिसाल आग की-सी है कि जो चीज़ों को ज़ला कर राख कर देती है। लेकिन साथ ही इसमें यह अच्छाई भी है कि यही हमारा खाना पकाती है। ताक़तवर इन्जन चलाने के लिये भाप बनाती है और सर्दी के मौसम में हमें आराम पहुँचाती है। गोया आग की तरह गुस्से में सिर्फ़ बुराइयाँ ही बुराइयाँ नहीं हैं, बल्कि फ़ायदे भी हैं।

गुस्सा नुक़सान पहुँचाने वाला दरअसल उस वक़्त बन जाता है, जब वह बेक़ाबू हो जाये यानी अक़्ल के मातहत न रहे। जिस तरह आग हमें उस वक़्त तक फ़ायदा पहुँचाती है जब तक उसे होशियारी के साथ इस्तेमाल किया जाये। खाना पकाना हो तो उसे चूल्हे के अन्दर इस तरह जलायें कि उसकी लपटें इधर-उधर न फैलने पायें। इसी तरह भाप की ताक़त हासिल करने के लिये उसे पानी की टंकी के नीचे बहुत सावधानी से जलायें और यह हिसाब रखें कि यह भट्टी कितनी देर जलती रहनी चाहिये। अगर ऐसा न किया जाये, तो आग फ़ायदे की जगह बड़ा नुक़्सान पहुँचाएगी।

गुस्से का बिल्कुल ऐसा ही हाल है। यह अगर क़ाबू में हो तो उसी को होशियारी और बहादुरी कहते हैं, जो इन्सान की बहुत बड़ी अच्छाई है। यदि क़ाबू में न रहे तो जहालत और ज़ुल्म बन जाता है, जिसे कोई भी पसन्द नहीं करता।

गुस्से पर क़ाबू पा लेना, कितनी बड़ी अच्छाई और नेकी है, इसका अन्दाज़ा प्यारे नबी (सल्ल०) के इस फ़रमान से होता है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया—

"पहलवान वह नहीं जो अपने मुक़ाबले वाले को पछाड़ दे, बल्कि

पहलवान वह है, जो अपने गुस्से पर काबू पा ले।"

इस सिलसिले में हज़रत अली (रज़ि०) का यह किस्सा भी याद रखने के काबिल है कि एक लड़ाई में आप ने एक दुश्मन को पछाड़ दिया और जब उसे क़त्ल करने लगे तो उसने हज़रत अली (रज़ि०) के चेहरे पर थूक दिया। यह बहुत बड़ी गुस्ताख़ी थी। लेकिन हुआ यह कि हज़रत अली (रज़ि०) ने उसे छोड़ दिया। क़त्ल करने से रुक गये। इस पर उस दुश्मन ने हैरान होकर पूछा, "आपने मुझे क्यों छोड़ दिया? मैंने तो यह हरकत इस ख़्याल से की थी कि गुस्से में भर कर आप मुझे जल्दी से क़त्ल कर देंगे और मैं उस तकलीफ़ से बच जाऊँगा, जो मौत से पहले उठा रहा था?"

हज़रत अली (रज़ि०) ने इरशाद फ़रमाया– "पहले मैं तुझे अल्लाह के लिये क़त्ल कर रहा था। (तेरी-मेरी) निजी दुश्मनी न थी, लेकिन तेरी इस हरकत की वजह से मुझे गुस्सा आ गया और अगर अब मैं तुझे क़त्ल करता, तो यह अपनी बेइज़्ज़ती का बदला लेना होता। बस इसी लिये मैंने तुझे छोड़ दिया।"

उस दुश्मन पर हज़रत अली (रज़ि०) की बात का ऐसा अच्छा असर हुआ की वह कलिमा पढ़ कर उसी वक़्त मुसलमान हो गया।

हम यकीन दिलाते हैं कि अगर आप सब भी ऐसा ही करेंगे यानी अपने गुस्से पर काबू पाकर अपने दुश्मन को माफ़ कर देंगे, तो आपको भी वैसा ही फ़ायदा हासिल होगा, जो दुश्मन को होगा। वह आपका दोस्त बन जायेगा और सवाब अलग मिलेगा।

बच्चों की ज़िन्दगी में बड़े वाक्ये तो नहीं होते, लेकिन छोटे-छोटे झगड़े आम तौर पर होते रहते हैं। ऐसे सब मौकों पर अल्लाह के इसी हुक्म पर अमल करना चाहिये। गुस्से पर काबू पाना चाहिये और दूसरों को माफ़ कर देना चाहिये।

बुराई करने वालों से अलग रहो

ज़िन्दगी गुजारने के दो तरीके हैं। एक अच्छा, दूसरा बुरा। अच्छाई या नेकी के रास्ते पर चलने वाले खुद भी फ़ायदे में रहते हैं और दूसरों को भी फ़ायदा पहुंचाते हैं। बुराई के रास्ते पर चलने वालों का हाल हमेशा बुरा रहता है और उनकी वजह से दूसरों को भी तकलीफ़ पहुँचती है।

इस बात को मिसाल के ज़रिये समझना चाहें तो यों कहेंगे। एक बच्चा तो वह है जो अपने बुज़ुर्गों के कहने के मुताबिक खूब शौक से तालीम हासिल करता है, साफ़-सुथरा रहता है, किसी ऐसे काम में हिस्सा नहीं लेता, जिसका नतीजा अच्छा न हो। यह बच्चा नेकी के रास्ते पर चलने वाला है और इस बात में ज़रा भी शक नहीं करना चाहिये कि इस रास्ते पर चलते हुये, जब वह बड़ा होगा तो उसे बिल्कुल आसानी से कोई काम मिल जायेगा या वह ज़रा-सी कोशिश से एक बड़ा ताजिर (व्यापारी) बन जायेगा, यहाँ तक कि वह जो काम भी शुरू करेगा, उसमें उसे कामयाबी हासिल होगी, और यह सब कुछ इस वजह से होगा कि कामयाबी हासिल करने के लिये जिन अच्छाइयों और जिन क़ाबिलियतों की ज़रूरत होती हैं, वे सब उसमें होंगी। उसके पास तालीम की ऊँची डिग्री होगी, मेहनत करने की आदत होगी और सबसे बड़ी बात यह कि उसके साथ अच्छी आदतों का नूर होगा।

इसके मुकाबले में एक ऐसे बच्चे को लीजिये, जो न बड़ों की नसीहतों पर कान धरता हो, न तालीम हासिल करने में दिल लगाता

हो। फ़ुज़ूल कामों में अपना क़ीमती वक़्त बरबाद करता रहे। ज़ाहिर है अपनी इन आदतों की वजह से न वह तालीम पूरी कर सकेगा और न किसी तरह की क़ाबलियत हासिल होगी और जब ऐसा होगा तो बड़ी उम्र को पहुँच कर उसे रोज़गार का कोई अच्छा ज़रिया भी न मिलेगा।

बचपन में तो ख़ैर सारा ख़र्च माँ-बाप उठाते हैं, लेकिन बड़े होकर रोज़ी हासिल करने के लिये इन्सानों को ख़ुद कोशिश करनी पड़ती है और यह कोशिश उसी वक़्त कामयाब होती है, जब किसी के अन्दर क़ाबलियत हो।

हमारा ख़्याल है कि इन दोनों बच्चों की मिसाल से यह बात अच्छी तरह समझ में आ जाती है कि अच्छाई के रास्ते पर चलने वाला फ़ायदे में और बुराई का रास्ता अपनाने वाला घाटे में रहता है। अब इस बारे में एक बात और यह समझ लेनी चाहिये कि कोई बच्चा पैदाइशी तौर पर अच्छा या बुरा नहीं होता, यहाँ तक कि दूसरे धर्म वालों के घर पैदा होने वाले बच्चे भी हर तरह से अच्छे और पाक होते हैं। यह बात क़ुरआन शरीफ़ ने बताई है।

सवाल पैदा होता है कि जब सारे बच्चे पाकीज़गी और अच्छाइयाँ लेकर पैदा होते हैं, तो उनमें से कोई अच्छा और बुरा क्यों बन जाता है? इस सवाल का जवाब यह है कि जिन हालात में कोई बच्चा परवरिश पाता है, उसका असर उसे अच्छा या बुरा बना देता है। इसी लिये हमारे दीने इस्लाम ने इस बात को बहुत ज़रूरी बताया है कि हर आदमी इस्लामी तरीक़े के मुताबिक़ साफ़-सुथरी और पाकीज़ा ज़िन्दगी बसर करे। उसका रोज़गार हासिल करने का ज़रिया जायज़ और पाकीज़ा हो। वह फ़ुज़ूल ख़र्च न हो, कन्जूस न हो, झगड़ालू न हो, सबके साथ अच्छा बरताव करे वग़ैरह।

ज़ाहिर है ऐसे घराने में जो बच्चा पैदा होगा, वह आपसे आप इन

अच्छाइयों का असर लेगा और धीरे-धीरे उसकी ज़ात में भी ये सारी अच्छाइयाँ पैदा हो जाएँगी। इसी तरह उस पर स्कूल के उस्तादों और साथियों का भी असर पड़ेगा। उसके दोस्त अच्छे होंगे तो अच्छा बन जायेगा, बुरे होंगे तो बुरा।

बेशक, कभी-कभी ऐसा भी होता है कि इन्सान की अपनी अच्छाइयाँ या बुराइयाँ सब बातों पर ग़ालिब आ जाती हैं, बुरे हालात में रहने वाला बच्चा भी बहुत अच्छा और क़ाबिल बन जाता है। लेकिन ज़्यादातर यही होता है कि बाहर के हालात लोगों को अच्छा या बुरा बनाते हैं और इसीलिये हमारे दीने इस्लाम ने यह बात ज़रूरी बताई है कि जो लोग बुराई के रास्ते पर चलने वाले हैं, उनसे दूर रहा जाये। ख़ास तौर पर बच्चों के लिये तो यह बात बहुत ही ज़रूरी है। उनका दिमाग़ सफ़ेद कोरे कागज की तरह होता है, जिस पर हल्का-सा रंग भी लग जाता है।

बुरे लोगों से अलग रहना और उनके कामों में शरीक न होना किस क़द्र ज़रूरी है, इसका अन्दाज़ा क़ुरआन मजीद की इस आयत से होता है। सच्चे मुसलमानों की निशानियाँ बताते हुये अल्लाह ने इरशाद फरमाया–

> "अल्लाह के नेक बन्दे वे हैं जो ज़मीन पर नर्म चाल चलते हैं और जाहिल उनके मुंह आयें (झगड़ा करना चाहें) तो कह देते हैं तुमको सलाम हो, जो अपने रब के आगे सजदे और क़ियाम करते हुये रातें गुज़ार देते हैं। जो दुआयें करते हैं ऐ हमारे रब! हमें दोज़ख़ के अज़ाब से बचा ले, उसका अज़ाब तो हलाक कर देने वाला है, जो ख़र्च करते हैं तो न फ़िज़ूल ख़र्ची करते हैं, न कंजूसी, बल्कि बीच का ठीक रास्ता इख़तियार करते हैं।" —25 : 13-16

प्यारे बच्चों को चाहिये कि कुरआन पाक की इन आयतों को जुबानी याद कर लें और उनका मतलब समझ कर उनके मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारें।

ज़िन्दगी की बरकतें हासिल करने के लिये यह बात बहुत ज़रूरी है कि इन्सान अपने आप को ज़्यादा से ज़्यादा अच्छा बनाये और खुद को बुराइयों से पाक रखने और अच्छा बनाने के लिये यह बात बहुत ज़रूरी है कि सिर्फ़ उन बच्चों को दोस्त बनाया जाये, जिनकी आदतें अच्छी हों।

बच्चों के मशहूर शायर मौलाना इस्माईल मेरठी ने कहा है—

अगर आग के पास बैठोगे जाकर,
तो उठोगे एक रोज़ कपड़े जला कर।
चलो, ख़ैर कपड़े बचाते रहे तुम,
मगर सेंक तो खूब खाते रहे तुम।

ग़ौर किया जाये तो बुराई के रास्ते पर चलने वाला आदमी साँप और आग से भी ज़्यादा खतरनाक होता है। अगर हिम्मत हो तो उसे अच्छा बनाने की कोशिश ज़रूर करनी चाहिये, लेकिन उसे दोस्त हरगिज़ नहीं बनाना चाहिये। हाँ! जब वह अच्छा बन जाये तो उसे दोस्त बनाने में कुछ हरज नहीं।

अच्छे कामों में हिस्सा लेना

हमारा दीन—इस्लाम हमें हुक्म देता है कि अल्लाह की इबादत करने के साथ दुनिया में नेकी फैलाने और बुराइयों को मिटाने की कोशिश करें, बल्कि कुछ लोगों का तो यह ख़्याल है कि जिस चीज़ को इबादत कहा गया है, वह यही है कि हम अल्लाह की मख़लूक़ को ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा पहुँचायें और उसकी ज़मीन को बुराइयों से पाक करने की कोशिशों में लगे रहें।

सब जानते हैं कि जिहाद हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है और जिहाद ऐसी ही कोशिशों का नाम है, जो नेकी को फैलाने और बुराइयों को मिटाने के लिये की जाती हैं। अगर इस्लाम के किसी दुश्मन से लड़ाई करनी पड़े तो यह जिहाद बिस्सैफ़ यानी तलवार के ज़रिए जिहाद होगा। किसी मुख़ालिफ़ के मज़मून का जवाब लिखा जाये तो जिहाद बिलक़लम यानी क़लम के ज़रिये जिहाद होगा और अगर किसी की बात को ग़लत साबित करने के लिये बातचीत या तक़रीर की जाये, तो यह ज़ुबान के ज़रिये जिहाद होगा।

प्यारे नबी (सल्ल०) का इरशाद है—

"अगर किसी तरह की बुराई होते देखो तो उसे ताक़त से रोक दो (यानी अगर बुराई को रोकने के लिये, बुराई करने वालों से जंग करनी पड़े तो करो) ऐसा करने की ताक़त नहीं रखते तो ज़ुबान से मना करो और अगर ऐसा भी न कर सको, तो दिल से उसे बुरा समझो और यह ईमान का सबसे कमज़ोर दरजा है।"

मतलब यह है कि बुराई होते देख कर चुप रहना मुसलमान की शान नहीं। सच्चा मुसलमान तो वह है जो बुराई को मिटाने और बुराई करने वालों की ताकत ख़त्म करने की कोशिश करे।

बच्चों को बड़ी-बड़ी बुराइयों और ख़राबियों से वास्ता नहीं पड़ता। उन्हें रोकना और मिटाना बड़ों का काम है। लेकिन कुछ बुराइयाँ इनकी छोटी-सी दुनिया में भी होती हैं। मिसाल के तौर पर चुग़ली खाना, किसी की कोई चीज़ छिपा देना या चुरा लेना; ऐसी शरारते करना, जिनसे दूसरों को तकलीफ़ पहुँचे वगैरह। ये सब बातें ऐसी हैं जो बच्चों में पाई जाती हैं, चुनांचे ज़रूरी है कि इनसे बचा जाये और न सिर्फ़ खुद बचा ज़ाये, बल्कि अपने साथियों को भी इनसे रोका जाये।

बुज़ुर्गों ने कहा है कि अच्छी या बुरी आदतों की बुनियाद बचपन की उम्र में रखी जाती है। जो बच्चे बचपन में शरीर (शोख़), गुस्ताख़ और बेपरवाह होते हैं, बड़े होकर भी ऐसे ही रहते हैं। वे ज़िन्दगी में कोई कामयाबी हासिल नहीं कर सकते और उनकी सारी ज़िन्दगी तकलीफ़ें सहते हुये गुज़रती है। इसलिये ज़रूरी है कि अगर ऐसी कोई कमज़ोरी हो, तो कोशिश करके उसे छोड़ दिया जाये।

अच्छा और कामयाब इन्सान बनने के लिये जो तदबीर सबसे अच्छी और हज़ारों लाखों बार आज़माई हुई है, वह यह है कि जिन बातों को बुरा कहा जाता है, उनसे अलग रहा जाये और जिन्हें अच्छा माना जाता है उनमें शामिल हुआ जाये। अल्लाह का हुक्म है—

> "जो काम नेकी और भलाई के हैं, उनमें दूसरों के साथ शामिल हो जाओ और जो काम गुनाह और ज़्यादती के हैं, उनमें एक दूसरे की मदद न करो। अल्लाह से डरो, उसकी पकड़ बहुत सख़्त है।" —5 : 2

हमारे ख़्याल में यह बताने की अब कोई ज़रूरत नहीं कि भलाई और नेकी के काम कौन-से हैं और बुराई या गुनाह के कौन-से? इस बारे में सीधी और बिल्कुल आसानी से समझ में आ जाने वाली बात यह है कि समझदार लोग जिस काम से रोकें, वह बुरा है। हमें भूल कर भी उसके पास नहीं जाना चाहिये। जो भी ग़ौर करेगा उसे बिल्कुल आसानी से मालूम हो जायेगा कि ऐसे सब काम नुक़सान पहुँचाने वाले हैं।

इसके मुक़ाबले में जिन कामों को अच्छा कहा जाता है, उनमें कुछ न कुछ फ़ायदा ज़रूर है। उनके करने वालों की इज़्ज़त भी बढ़ती है और उन्हें फ़ायदा भी पहुँचता है।

जो भलाई और नेकी के काम बच्चे आसानी से कर सकते हैं, वे ये हैं:—

(1) अपनी किताबों और अपने कपड़ों को साफ़-सुथरा रखें।

(2) फ़ुज़ूल कामों या गप-शप में अपना वक़्त बरबाद न करें। शौक़ से पढ़ें और खेलने के वक़्त खेलें।

(3) हॉकी, क्रिकेट और फुटबाल वग़ैरह खेलों में हिस्सा लें, लेकिन, जो खेल भी पसन्द हो स्कूल की टीम में शामिल होकर खेलें। सड़कों और गलियों में बल्ले हिलाते न फिरें।

(4) स्कॉउटिंग में शामिल होकर दूसरों की मदद करने के तरीक़े सीखें और अपने आपको दूसरों की मदद के क़ाबिल बनायें।

(5) अगर लड़ाई-झगड़ा हो जाये तो सुलह कराने की कोशिश करें। लड़ने वालों को उनके हाल पर न छोड़ें और हमेशा उसकी तरफ़दारी करें, जो हक़ पर हो।

हमने ये कुछ काम नमूने के तौर पर लिखे हैं। बच्चे ग़ौर करेंगे तो उन्हें मालूम हो जायेगा कि ऐसे और कौन-कौन से काम हैं, जिनमें वे आसानी से हिस्सा ले सकते हैं। ज़रूरी बात तो यह है कि भलाई के कामों में हिस्सा ज़रूर लेना चाहिये। ऐसा करने से इन्शाअल्लाह उन्हें बहुत फ़ायदे और बरकतें हासिल होंगी।

सलाम करना ज़रूरी है

यह बात इस्लामी अख़्लाक़ का ज़रूरी हिस्सा है कि जब दो मुसलमान आपस में मिलें, तो एक-दूसरे को सलाम करें और यह अल्लाह की बड़ी मेहरबानी है कि हमारे सलाम के शब्द दुनिया की सब क़ौमों के सलामों के शब्दों से अच्छे हैं। हमारा सलाम है–"अस्सलामु अलैकुम"–इसका मतलब है, तुम पर सलामती हो। इसके जवाब में "वालैकुमुस्सलाम" कहा जाता है, यानी तुम पर भी सलामती हो।

सलाम करना सुन्नत और इसका जवाब देना फ़र्ज़ है। सुन्नत उस काम को कहते हैं जो प्यारे नबी (सल्ल०) ने किया हो। उनमें कुछ काम ऐसे हैं कि आप (सल्ल०) ने ख़ुद किये और उम्मत के लोगों को हुक्म दिया कि वे भी किया करें, उन्हें सुन्नते मुअक्कदा कहते हैं और सलाम हुज़ूर (सल्ल०) की ऐसी ही सुन्नत है।

फ़र्ज़ उस काम को कहते हैं, जिसका करना ज़रूरी है, न किया जाये तो इन्सान सज़ा का हक़दार बन जाता है और सलाम का जवाब देना ऐसा ही ज़रूरी काम है, यानी अगर कोई सलाम करे तो जवाब ज़रूर दिया जाये। सलाम के आदाब ये हैं:

(1) छोटी उम्र वाले सलाम करने में पहल करें, यानी अगर ऐसे दो आदमी आपस में मिलें, जिनमें से एक की उम्र दूसरे से छोटी हो, तो छोटी उम्र वाला बड़ी उम्र वाले को सलाम करे।

(2) सवार पैदल को सलाम करे, यानी अगर एक आदमी

साईकिल पर आ रहा हो और दूसरा पैदल चल रहा हो तो साइकिल पर आने वाला सलाम में पहल करे।

(3) आने वाला बैठे हुये लोगों को सलाम करे, यानी अगर कुछ आदमी बैठे हुये हों और एक आदमी बाहर से वहाँ आये, तो आने वाले के लिये ज़रूरी है कि बैठे हुये लोगों को सलाम करे।

(4) अगर किसी जगह बहुत-से आदमी बैठे हों और कोई उन्हें सलाम करे, तो उनमें से किसी एक आदमी का जवाब दे देना काफ़ी होगा। यह जवाब सबकी तरफ़ से समझा जायेगा। यह बात ज़रूरी न होगी की हर आदमी जवाब दे। हाँ ! यह बात ज़रूरी होगी कि जवाब देने वाला सलाम करने वाले के शब्दों से बेहतर शब्दों में जवाब दे। मिसाल के तौर पर आने वाला अस्सलामु अलैकुम कहता है, तो जवाब में वालैकुमुस्सलाम व रहमतुल्लाह व बराकातुह, कहा जाये। कुरआन मजीद में इरशाद हुआ—

> "और जब कोई अदब के साथ तुम्हें सलाम करे, तो उसे उससे अच्छे तरीके से जवाब दो या कम-से-कम उसी तरीके से और अल्लाह हर चीज़ का हिसाब लेने वाला है।"
>
> ---4 : 86

बदकिस्मती से कुछ लोग सलाम करने और उसका जवाब देने के बारे में बे-परवाई करते हैं। बाहर से आयेंगे तो सलाम किये बग़ैर हंसी-मज़ाक की बातें शुरू कर देंगे। कुछ लोग तो ग़ुरूर भरे अन्दाज़ में सिर्फ़ सिर हिला देते हैं। यह बात इस्लामी तरीके के ख़िलाफ़ है। बाहर से आने वालों को अच्छे तरीके से सलाम करना चाहिये और जिन लोगों को सलाम किया जाये, उन्हें कुरआन मजीद के हुक्म के मुताबिक़ और भी अच्छे शब्दों में सलाम का जवाब देना चाहिये।

इस बारे में एक बड़ी ग़लती यह भी की जाती है कि 'अस्सलामु अलैकुम' कहने के बजाये आदाब अर्ज़ कहा जाता है और ख़्याल यह किया जाता है कि हम ज़्यादा पढ़े-लिखे और मुहज़्ज़ब हैं, हालाँकि यह खुली जिहालत की बात है। ऐसे लोग न सिर्फ़ सलाम के सवाब से महरूम रह जाते हैं, बल्कि इस्लामी तरीक़ा छोड़कर गुनहगार होते हैं।

हालांकि क़ायदा यह बनाया गया है कि छोटी उम्र के लोग बड़ी उम्र वालों को सलाम करें। लेकिन हमारे हुज़ूर (सल्ल०) सलाम में हमेशा पहल करते थे। कोई छोटी उम्र वाला मिलता, तो उसे भी पहले सलाम फ़रमाते। इसलिये सलाम करने में पहल करना बेहतर है।

एक बात यह भी ज़रूरी है कि जब कोई आदमी अपने घर में दाख़िल हो तो घर वालों को सलाम करे और जब बाहर जाने लगे तो सलाम करके रुख़्सत हो। इस दुआ यानी सलाम में अल्लाह ने हज़ारों बरकतें रखी हैं।

हमें चाहिये कि एक-दूसरे को सलाम किया करें। हमारे हुज़ूर (सल्ल०) ने सलाम को रिवाज देने की ताकीद फ़रमायी है।

आज़माइश में सब्र

जब कोई आदमी पुलिस या फ़ौज में भर्ती होता है, तो भर्ती करने से पहले यह ज़रूर देखा जाता है कि उसकी सेहत कैसी है, चाल-चलन कैसा है और तालीम कितनी है। ये बातें मालूम करने के लिये खूब जाँचं-परख की जाती है। डॉक्टर उसका कद और सीना नापते और इस बात से पूरी तरह इत्मीनान करते हैं कि वह किसी ख़तरनाक बीमारी में मुब्तला तो नहीं। इसी तरह उसकी तालीम और चाल चलन के बारे में जानकारियाँ इकट्ठी की जाती हैं और जब सब बातों की तरफ़ से इत्मीनान हो जाता है, तो उसे भर्ती कर लिया जाता है।

एक भर्ती तो यह है, जिसका हमने ऊपर की लाइनों में ज़िक्र किया। बिल्कुल इसी तरह अल्लाह ने भी अपनी फ़ौज में भर्ती करने के लिये कुछ शर्तें कायम कर रखी हैं। जो आदमी इन शर्तों पर पूरा उतरता है, वह अपनी हैसियत के मुताबिक अल्लाह की फ़ौज में अफ़सर या सिपाही बन जाता है। जो पूरा नहीं उतरता उसे भर्ती नहीं किया जाता, और अब इस बात का अन्दाज़ा बच्चे खुद कर सकते हैं कि जो आदमी अल्लाह की फ़ौज में भर्ती होने से रह जाये, वह कैसा बदनसीब होता है।

रह गई यह बात कि पुलिस और फ़ौज आदि में भर्ती हो जाने वालों को तो सरकारी ख़ज़ाने से बाकायदा तनख़्वाह मिलने लगती है और दूसरी बहुत-सी आसानियाँ हासिल हो जाती हैं। जो लोग अल्लाह की फ़ौज में भर्ती होते हैं, उन्हें क्या मिलता है ? तो इस सवाल का जवाब यह है कि उन्हें वह कुछ मिल जाता है, जो दुनिया का बड़े-से-बड़ा

बादशाह भी नहीं दे सकता। वे सही मायनों में सरदार बना दिये जाते हैं। लोगों के दिलों पर उनकी हुकूमत कायम कर दी जाती है और उन्हें ऐसी इज़्ज़त और आराम हासिल होता है, जिसका सही-सही हाल बयान करना भी मुश्किल है और इससे भी बड़ी बात यह है कि इनाम इस दुनिया तक ही नहीं होता, बल्कि दूसरी दुनिया में इससे भी बड़ा दर्जा दिया जाता है। नेकी और भलाई के साथ उनका नाम ज़िन्दा रहता है और क़ौमें उन पर फ़ख्र करती हैं।

अपनी फ़ौज में भर्ती करने से पहले आज़माने के बारे में अल्लाह ने कुरआन मजीद में यों इर्शाद फ़रमाया है—

> "क्या लोगों ने यह समझ रखा है कि वे बस इतना कहने पर छोड़ दिये जायेंगे कि हम ईमान लाये और उनको आज़माया न जायेगा, हालाँकि हम उन सब लोगों की आज़माइश कर चुके हैं, जो इनसे पहले गुज़रे हैं। अल्लाह को ज़रूर यह देखना है कि सच्चे कौन हैं और झूठे कौन।"
>
> —29 : 1-3

इस बारे में एक और ख़ास बात यह है कि आज़माइश एक जैसी नहीं होती, बल्कि इस तरह होती है, जिस तरह छोटे दर्जों में पढ़ने वाले बच्चों के पर्चे आसान और बड़े दर्जों में पढ़ने वालों के पर्चे मुश्किल होते हैं और ऐसा होना भी चाहिये। यह तो हो नहीं सकता कि तालिबे इल्म से दो का पहाड़ा सुन लिया जाये और एम.ए. की डिग्री दे दी जाये। यह ख़ास डिग्री लेने के लिये तो ढेर सारी मोटी-मोटी किताबें पढ़नी पड़ती हैं। बस बिल्कुल इसी तरह अल्लाह की फ़ौज में बड़ा मुकाम लेने के लिये मामूली-से-मामूली बुराई से बचना भी ज़रूरी होता है और मामूली-से-मामूली नेकी करने की कोशिश की जाती है।

शायद कुछ बच्चे यह ख़्याल करें कि यह अल्लाह की फ़ौज में भर्ती होने की बात तो बड़ों के लिये है, हमारा इससे क्या ताल्लुक़, तो भाई ऐसा ख़्याल ठीक नहीं है। दुनिया के सब आलिम यह बात मानते हैं कि इन्सान की अच्छी या बुरी आदतों के मज़बूत होने का काम बचपन से शुरू हो जाता है। जो बच्चे अपने बुज़ुर्गों और उस्तादों की नसीहतों पर अमल करते हुये अच्छी आदतें इख़्तियार करते हैं और बुराइयों से बचते हैं, वे बड़े होकर कामियाब और बड़े आदमी बनते हैं। जो ऐसा नहीं करते, उन्हें यह इज़्ज़त हासिल नहीं होती। मतलब यह हुआ कि बच्चे इस छोटी उम्र में जो काम करते और आदतें सीखते हैं, उन्हीं के नतीजे में वे अच्छे या बुरे और कामियाब या नाकाम इन्सान बनते हैं। और इस बात का एक मतलब यह हुआ कि अल्लाह की फ़ौज में भर्ती होने का इम्तिहान बचपन की उम्र ही से शुरू हो जाता है।

किसी गली मुहल्ले या किसी स्कूल में चले जायें, हमें कुछ बच्चे ऐसे मिलेंगे, जिन्हें हर तरह का आराम और आसानी हासिल होगी। ये अमीर घरों के बच्चे हैं। इनके मुक़ाबले में कुछ बच्चे मामूली हालत में होंगे। ये ग़रीब घरों में पैदा होने वाले बच्चे हैं।

अब सवाल पैदा होता है, इनमें से इम्तिहान किन बच्चों का लिया जा रहा है? ऐसा महसूस होता है कि ग़रीब घरों में पैदा होने वाले बच्चों ही का इम्तिहान लिया जा रहा होगा कि क्या वे तकलीफ़ में नेक और शरीफ़ रहते हैं या नहीं। बेशक ऐसा भी होता है। अल्लाह पाक छोटी-छोटी तकलीफ़ों में मुब्तिला करके यह देखता है कि कौन उसकी फ़ौज में भर्ती होने के क़ाबिल हैं और कौन नहीं। लेकिन इसके साथ ही आज़माइश अमीर बच्चों की भी होती है।

यह पूरी बात इस तरह है कि जिन बच्चों को अल्लाह पाक अमीर घरों में पैदा करता है, उनके बारे में यह मालूम करता है कि वे अमीर

होने की वजह से घमंडी तो नहीं हो गये। दूसरों को कम दर्जे का तो नहीं समझते और उन्हें तकलीफ़ें तो नहीं देते? अगर उनमें से कोई बच्चा ऐसा हो कि ग़ुरूर और घमंड करता हो और ग़रीब बच्चों को सताता हो, तो उसे हिज़्बुल्लाह यानी अल्लाह की फ़ौज में भर्ती नहीं किया जाता। अमीर बच्चों में से अल्लाह की फ़ौज में उन्हें भर्ती किया जाता है, जो अल्लाह की नेअमतें पाकर उसका शुक्र अदा करते हैं और अल्लाह ने अपनी ख़ास मेहरबानी से उन्हें जो कुछ दिया है, उससे दूसरों को फ़ायदा पहुँचाते हैं।

ग़रीब बच्चों का इम्तिहान तकलीफ़ों में होता है। अल्लाह यह देखता है कि परेशान होकर कोई ग़लत काम तो नहीं करते। देखा गया है कि किसी वजह से ग़रीब हो जाने की सूरत में कुछ चोरी-चकारी शुरू कर देते हैं, या किसी और बुराई में फँस जाते हैं। यह बिल्कुल ग़लत और अल्लाह को नाराज़ कर देने वाली बातें हैं। ऐसे लोग कभी अल्लाह की फ़ौज में भर्ती नहीं हो सकते। अल्लाह की फ़ौज़ में वे भर्ती होते हैं, जो तकलीफ़ों पर सब्र करते हैं और यह यक़ीन रखते हैं कि अगर अल्लाह ने हमें ग़रीब कर दिया है तो ज़रूर इसमें भी हमारी कोई भलाई होगी। हाँ, वे मेहनत और कोशिश में कमी नहीं करते। जायज़ तरीक़ों से रोज़ी हासिल करके अपनी तकलीफ़ें दूर करते हैं।

इन सारी बातों का खुलासा यह है कि इन्सान की सबसे बड़ी कामियाबी अपने अल्लाह के हुक्मों पर चलने में है। ऐसा करने वाले खुश नसीब लोग ही उसकी रहमत के हक़दार बनते हैं और उसका हुक्म यह है कि अगर आसानी और आराम हासिल हो तो उसका शुक्र अदा किया जाये और कमज़ोरों और ग़रीबों की मदद की जाये और अगर किसी वजह से कोई तकलीफ़ आ गई हो तो सब्र और हौसले से उसे बरदाश्त किया जाये और मेहनत और क़ाबिलियत से उसे दूर करने की कोशिश की जाये।

उठने-बैठने के आदाब

कुछ लोगों को तमीज़दार और कुछ को बदतमीज़ कहा जाता है। जिन बातों की वजह से लोगों को ये अलग-अलग दर्जे मिलते हैं, उनमें से एक यह भी है कि जब वे कहीं जाते हैं, तो किस तरह उठते-बैठते हैं। ख़ास तौर पर कुछ बच्चों का तो यह हाल होता है कि कहीं गये तो एक हंगामा खड़ा कर दिया। उचक कर पलंग पर चढ़ गये। वहाँ से छलाँग लगाई, तो कुर्सी पर आ गये। ऐसी हरकतों से न सिर्फ़ मेज़बान यानी वे लोग जिनके घर वे बच्चे गये हों परेशान होते हैं, बल्कि ख़ुद उनकी अम्मी और अब्बू भी शर्मिन्दा होते हैं। ऐसे ही बच्चों को बदतमीज़ कहा जाता है।

इनके मुकाबले में तमीज़दार और शरीफ़ बच्चे वे कहलाएँगे जो किसी के घर जायें तो उठने-बैठने के आदाब का ख़्याल रखें। जहाँ मेहमानों को यानी आने वालों को बिठाया गया हो ठीक जगह बैठ जाये और कोई ऐसी हरकत न करें, जिससे दूसरे परेशान हों।

हमारे दीन इस्लाम की यह बहुत बड़ी ख़ूबी है कि उसने ज़िन्दगी की सभी बातों के बारे में बता दिया है कि कौन-सा तरीका अच्छा और कौन-सा बुरा है, चुनाँचे उठने-बैठने के आदाब के बारे में भी उसने हमें बताया है। कुरआन मजीद में इरशाद हुआ—

> ''ऐ लोगो ! जो ईमान लाये हो, जब तुमसे कहा जाये कि अपनी मजलिसों में दूसरों के लिये जगह बनाओ, तो जगह बना दिया करो। अल्लाह तुम्हें आसानियाँ बख़्शेगा और जब तुमसे कहा जाये कि उठ जाओ, तो उठ जाया करो। तुम में से

जो लोग ईमान रखने वाले हैं और जिनको इल्म बख़्शा गया है, अल्लाह उनको ऊंचे दर्जे देगा। और जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह उससे अच्छी तरह बाख़बर है।"—58 : 110

क़ुरआन करीम की इस आयत में सिर्फ़ यह हिदायत की गई है कि जब तुम मजलिस में बैठे हो और कुछ लोग आ जायें तो यह नहीं होना चाहिये कि सब अपनी-अपनी जगह जमे बैठे रहें, बल्कि होना यह चाहिये कि जो लोग आये हैं, उन्हें जगह दी जाये, लेकिन यह सिर्फ़ इतनी-सी बात नहीं है, बल्कि इसमें मजलिस के आदाब यानी उठने-बैठने के पूरे आदाब बता दिये गये हैं।

जिन लोगों के दिलों में दूसरों की भलाई का ख़्याल नहीं होता, वे तो ज़रूर हर मामले में अपना फ़ायदा देखते और अपनी शान बढ़ाना चाहते हैं। ऐसे लोग कहीं जाते हैं, तो सबसे अच्छी जगह बैठने की कोशिश करते हैं और इस तरह फैल कर बैठते हैं कि कई आदमियों की जगह घिर जाती है। अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) ने ऐसा करने से रोका है।

महफ़िल में बैठने का (बल्कि जहाँ भी हम जायें) इस्लामी तरीक़ा यह है कि सबसे अच्छी जगह बैठने की कोशिश न करें। अपनी हैसियत के मुताबिक़ मुनासिब जगह पर अदब से बैठ जायें और पाँव फैलाकर न बैठें। मिसाल के तौर पर छोटी उम्र के बच्चों को अपने माँ-बाप या जिनके साथ वे आये हों, उनके सामने बहुत अदब से बैठ जाना चाहिये। पैर सिकोड़ कर दो ज़ानू बैठना चाहिये। कुर्सी पर बैठे हों तो जिस तरह दूसरे पैर लटका कर बैठे हों, इसी तरह बैठें। कोई ख़ास ज़रूरत हो तो अपनी जगह से उठें, यूँ ही उचकते न फिरें और बहुत अदब से रास्ता बना कर जायें। लोगों के ऊपर से फ़लाँगते हुये न जायें। अगर बड़ी उम्र का कोई आदमी आये और कोई कुर्सी ख़ाली न

हो तो उसके लिये अपनी कुर्सी ख़ाली कर दें और ख़ुद अपने अब्बू या अम्मी के साथ बैठ जायें।

अगर किसी जगह बहुत-से आदमी बैठे हों, तो ऊँची आवाज़ में बातें न करें। पहले तो ख़ामोश रहना चाहिये, लेकिन अगर कोई ज़रूरी बात करनी पड़े तो ऐसी आवाज़ में करें जिससे दूसरे परेशान न हों। इसी तरह सरगोशी और काना- फूँसी करना भी महफ़िल के आदाब के ख़िलाफ़ है। सरगोशी और कानाफूसी चुपके-चुपके कान में बात करने को कहते हैं। अगर महफ़िल में यह हरकत की जाये तो दूसरों को शक होता है कि ये हमारे ख़िलाफ़ बातें न कर रहे हों। अगर किसी के घर जायें तो उनकी चीज़ों को हाथ नहीं लगाना चाहिये। अगर किसी चीज़ की ज़रूरत पड़े तो मेज़बानों में से किसी से गुज़ारिश करनी चाहिये कि हमें फ़लाँ चीज़ दे दीजिये। यह बात आम तौर पर देखी जाती है कि घर में दाख़िल होते ही बच्चे चीज़ें उलट-पुलट करनी शुरू कर देते हैं। मेज़ पर रखी हुई किताबें और दूसरी चीज़ें उठा लेंगे। काग़ज उलट-पुलट करने लगेंगे। यह बात बुरी बातों में से भी एक बहुत बुरी बात है। ऐसा करने से कभी-कभी मेज़बान का नुक़सान हो जाता है।

दूसरों के घर के अलावा इन सब बातों का ख़्याल अपने घर में भी रखना चाहिये। यह नहीं होना चाहिये कि कभी बाजी की चीज़ों में जा घुसे और कभी भाई जान के कमरे में घुस गये। इजाज़त के बग़ैर किसी की चीज़ को भी हाथ नहीं लगाना चाहिये और ख़ास अपनी चीज़ों को बहुत सलीक़े से उनकी जगह पर रखना चाहिये।

लापरवाह बच्चे स्कूल से आते हैं, तो अपनी चीज़ें इधर-उधर फेंक देते हैं—बस्ता कहीं, जूते कहीं, टोपी कहीं। इसका यह नतीजा निकलता है कि दूसरे दिन जब स्कूल जाने लगते हैं, तो कोई चीज़ भी

नहीं मिलती। ढूँढ़ने और शोर मचाने पर बस्ता बावरचीख़ाने और जूते गुसलख़ाने में मिलते हैं। ऐसा करने से न सिर्फ़ यह कि परेशानी होती है, बल्कि चीज़ें भी ख़राब हो जाती हैं।

सही तरीक़ा यह है कि हर चीज़ के लिये जगह तय कर ली जाये और कैसी भी जल्दी में हो, उसे वहीं रखना चाहिये। सलीक़ा और तमीज़दारी इसी चीज़ का नाम है और यह तो सब जानते हैं कि इज़्ज़त ऐसे लोगों ही की होती है जो हर मामले में आदाब का ख़्याल रखते हैं।

जिस घर में ऐसे तमीज़दार बच्चे हों, वे अगर छोटे भी हों तो साफ़-सुथरे और ख़ुशनुमा होते हैं और घर के सब लोगों को इत्मीनान और आराम मिलता है।

लालच बुरी बला है

एक सच्चा मुसलमान जिस तरह बुज़दिल और बेईमान नहीं होता, इसी तरह लालची और कंजूस मक्खीचूस भी नहीं होता। दूसरी बुराइयों की तरह यह बुराई यानी लालच और कंजूसी भी ज़िन्दगी को तकलीफ़ों से भर देने वाली बुराई है। ऐसे आदमी में एक ख़राबी तो यह होती है कि वह अपनी ज़रूरत से ज़्यादा माल-दौलत और दूसरी चीज़ें समेटने की कोशिश करता है और लालच में ऐसा अन्धा हो जाता है कि दूसरों का हक़ मारने पर भी तैयार हो जाता है। भूखों के मुँह से निवाला तक छीन लेता है।

लालच और कंजूसी असल में एक ही अख़्लाक़ी बीमारी के दो नाम हैं। जिस आदमी को यह बीमारी लग जाये, वह एक तरफ़ तो ज़्यादा-से-ज़्यादा माल जमा करने की कोशिश करता है और दूसरी तरफ़ जायज़ और बहुत ज़रूरी कामों में भी अपना माल ख़र्च नहीं करता।

हमारे दीन इस्लाम ने लालच और कंजूसी को बहुत बड़ा गुनाह बताया है और ऐसे लोगों को यह ख़बर सुना दी है कि जो भी यह गुनाह करेगा उसे सख़्त सज़ा दी जायेगी। क़ुरआन मजीद में इस सिलसिले की कई आयते हैं। एक जगह अल्लाह ने इर्शाद फ़रमाया–

> "देखो! तुम लोगों से कहा जा रहा है कि अल्लाह के लिये माल ख़र्च करो। इस पर तुम में से कुछ लोग हैं, जो कंजूसी कर रहे हैं। हालाँकि हक़ीक़त में वे अपने आपसे ही कंजूसी कर रहे हैं। अल्लाह तो ग़नी है। तुमही उसके

मुहताज हो। अगर तुम उसके हुक्म न मानोगे तो वह तुम्हें मिटाकर तुम्हारी जगह दूसरी क़ौम ले आएगा और वे तुम जैसे न होंगे।''

—47 : 38

इस आयत में दो बातें ख़ास तौर से बतायी गयी हैं। एक तो यह कि अगर तुम अल्लाह के हुक्मों के मुताबिक़ माल ख़र्च न करोगे यानी लालची और कंजूस बन जाओगे, तो अपना ही नुक़सान करोगे। दूसरे तुम्हारे पास जो कुछ भी है वह दरअसल अल्लाह पाक ही का दिया हुआ है। दुनिया जहाँ में जो भी है अल्लाह का मुहताज है।

कम समझ लोग तो यह ख़्याल करते हैं कि उनके पास जो कुछ है वह उन्होंने खुद या उनके बाप-दादा ने अपनी कोशिश से हासिल किया है। लेकिन जिन्हें हकीकत में अक्ल का नूर मिला है, वे इस बात को अच्छी तरह समझते हैं कि सिर्फ़ अपनी कोशिश से तो इन्सान मक्खी का एक पर भी नहीं बना सकता। जिस पानी की वजह से खेतों में अनाज और बाग़ों में फल-फूल पैदा होते हैं। वह पानी अल्लाह ने बनाया है। जिस ज़मीन से ये सब चीज़ें उगती हैं, उसमें बीज को पौधा बनाने की तासीर अल्लाह ने रखी है। सूरज की रोशनी और गर्मी उसी के हुक्म से हम तक पहुँचती है। हवा वही चलाता है, ग़रज़ ज़मीन आसमान की एक चीज़ भी ऐसी नहीं, जिसे बनाने की हम ताक़त रखते हों, बल्कि हमारी मजबूरी और मुहताजी का तो यह हाल है कि उस वक़्त तक किसी चीज़ को ठीक तरीक़ों से इस्तेमाल भी नहीं कर सकते, जब तक हमें बताया और समझाया न जाये और जब असलियत यह है और बिल्कुल यही है, तो यह कितनी ना-समझी की बात है कि सब चीज़ों के पैदा करने वाले अल्लाह का हुक्म न माना जाये। आदमी लालची और कंजूस बन जाये।

बच्चे ग़ौर करेंगे तो उनकी समझ में भी यह बात आ जायेगी कि लालच और कंजूसी बिल्कुल घाटे का सौदा है।

अमल कैसे करें?

अल्लाह की ख़ास मेहरबानी से लेखक को ये बातें लिखने का और प्यारे बच्चों को क़ुरआन मजीद की यह बातें पढ़ने का मौक़ा मिला। पिछले पेजों में हमने कई बार लिखा है कि किसी बात को सिर्फ़ अच्छा मान लेना ही काफ़ी नहीं होता, बल्कि उसका असल फ़ायदा तब पहुँचता है, जब उस पर अमल किया जाये।

पहले हिस्से में हमने बादाम की मिसाल दी थी कि अगर कोई यह बात दिल से मान ले कि बादाम बहुत फ़ायदेमन्द और उम्दा चीज़ है। लेकिन न कभी ख़रीद कर लाये और न कभी तोड़ कर खाये, तो उसे वह फ़ायदा कभी हासिल न होगा, जो बादाम खाने से होता है। बस अच्छी बातों की भी यही सूरत है, उन्हें जानने और मानने का फ़ायदा उन्हीं लोगों को पहुँचता है, जो उन पर अमल भी करें।

रह गई यह बात कि अमल किस तरह करें? तो इस का जवाब आसान भी है और मुश्किल भी। मुश्किल इस तरह कि अभी तक कोई ऐसी मशीन ईजाद नहीं हुई कि उसका बटन दबा दें और आदमी अच्छी बातों पर अमल करने लगे। इसके लिये तो थोड़ी बहुत तकलीफ़ उठानी पड़ेगी और हर शख़्स यह तकलीफ़ उठाने के लिये तैयार नहीं होता। इसलिये यह अमल करने वाली बात मुश्किल हुई। आसान इसलिये कि अमल करने के लिये भी किसी मशीन की ज़रूरत नहीं, बस पक्का इरादा करने की ज़रूरत होती है और पक्का इरादा एक कमज़ोर बच्चा भी कर लेता है। टाफियाँ खाने के लिये रोना शुरू कर देना और उस वक़्त तक रोते रहना जब तक अम्मी पैसे न दें, बच्चे

का पक्का इरादा ही तो होता है।

इस बारे में जो बात इन्सान की मुश्किल हल कर देती है और उस पर अमल करना आसान बना देती है, वह है नतीजे पर ग़ौर करना यानी यह सोचना कि जो काम हम करने चले हैं उसका नतीजा क्या निकलेगा। और जब कोई यह सोचेगा, तो उसे आसानी से मालूम हो जायेगा कि जिन बातों को अच्छा कहा जाता है उनमें से एक बात भी ऐसी नहीं जिससे आदमी की इज़्ज़त ज़्यादा न होती हो, उसे आराम न मिलता हो और उसकी ज़िन्दगी हर तरह अच्छी न बन जाती हो।

इसी तरह जिन बातों को बुरा कहा जाता है, उनमें से एक भी ऐसी नहीं जिसे करने के बाद तकलीफ़ न पहुँचती हो और आदमी की इज़्ज़त कम न होती हो। जो लोग ऐसी हरकतें करते हैं, वे दरअसल नतीजे पर कभी ग़ौर ही नहीं करते। ग़ौर करें तो अपना इरादा फ़ौरन बदल दें। कोई समझदार शख़्स यह कभी पसन्द न करेगा कि उसे फ़ायदा तो रुपये का हो और नुक़्सान पाँच हज़ार रुपयों का हो जाये। प्यारे बच्चो, हम सच कहते हैं बुराई पर चलने वालों और भलाई के कामों से बेपरवाह लोगों के फ़ायदे नुक़सान का यही मामला है।

मसलन एक बच्चा स्कूल का काम करने के बजाय खेल-कूद में अपना वक़्त बरबाद करता है, तो उसे फ़ायदा तो इतना-सा हुआ (अगरचे उसे भी फ़ायदा नहीं कह सकते) कि वह अपने जैसे निकम्मे बच्चों के साथ थोड़ी देर गप्पें हाँकता रहा या उछल-कूद में लगा रहा। लेकिन नुक़सान यह हुआ कि इल्म जैसी दौलत से महरूम रह गया। इम्तिहान हुआ तो उसे फ़ेल कर दिया गया। काम न करने की वजह से छड़ी भी खानी पड़ी। घर आकर फिटकार भी पड़ी।

हम पूरे यक़ीन के साथ कहते हैं कि अगर यह निकम्मे मियाँ इस बात पर ग़ौर कर लेते कि निकम्मे दोस्तों के साथ खेलने का कितना

मामूली फ़ायदा और स्कूल का काम न करने का कितना बड़ा नुक़सान होगा, तो वे यह घाटे का सौदा कभी न करते।

मालूम हुआ अच्छी बातों पर अमल करने के लिये अपने आप को तैयार करने का बिल्कुल आसान तरीक़ा यही है कि हर काम के अन्जाम और नतीजे पर ग़ौर कर लिया जाये।

इसके अलावा एक और बहुत मुफ़ीद बात लोगों की हालत पर ग़ौर करना भी है। हमारी दुनिया में कोई जगह भी ऐसी नहीं है, जहाँ कामियाब और नाकाम दोनों तरह के लोग आबाद न हों और यह बात मालूम न की जा सके कि जो लोग इज़्ज़त और शान से ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं, वे यूँ ही ऐसे इनाम के हक़दार नहीं बन गये, बल्कि उन्होंने अपनी क़ाबिलियत, शराफ़त और मेहनत की वजह से यह ऊँचा दर्जा हासिल किया है और इसी तरह नाकाम रह जाने वालों के बारे में मालूम होगा कि यह बदनसीब अपनी बुरी आदतों की वजह से ही इस हाल को पहुँचे हैं—न उन्होंने मेहनत से तालीम् हासिल की, न अच्छे-अच्छे काम करके इज़्ज़त के हक़दार बने। अब परेशानियों में घिरे हुये हैं, तो गोया यह उनके अपने हाथों की क़माई है।

प्यारे बच्चे यह बात ज़रूर समझ गये होंगे कि कामियाब होने के लिये अपनी आदतों को अच्छा बनाना ज़रूरी है और आदतों को अच्छा रखने का आसान तरीक़ा यह है कि जो काम भी करने लगें उसके नतीजे पर ग़ौर कर लें और यह बात अच्छी तरह समझ लें कि जिन लोगों ने अच्छी बातें अपनायीं उन्हें इज़्ज़त और आराम दोनों हासिल हुये। जिन्होंने ऐसा न किया वे इनसे महरूम हो गये।